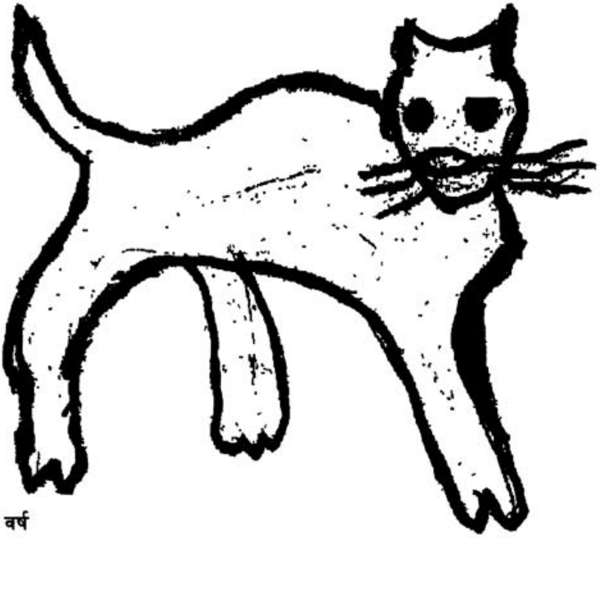
तुमने यह क्या बनाया



चित्र: शोभा, 9 वर्ष

कमलेश चन्द्र जोशी

बच्चों के बनाए चित्र – यानी चील बिलउवा; ज़रा गहराई में जाकर देखिए, ये चील बिलउवा कुछ कहते नज़र आएंगे

एक दिन मैं सेंटर के बाहर बैठकर बच्चों के चित्र देख रहा था कि रजनी की मां मेरे पास आई और मुझसे शिकायत भरे अंदाज़ में कहने लगी, "आप बच्चों से ये क्या 'चील-बिलउवा' बनवाते हैं? उन्हें कुछ पढ़ना-लिखना भी सिखाओ।" रजनी की मां की इस बात ने मुझे सोचने पर

मजबूर किया कि हम बच्चों के बनाए इन 'चील-बिलउवा' यानी चित्रों में क्या देखते हैं?

हमारे सेन्टर पर आने वाले सभी बच्चों से खूब चित्र बनवाए जाते हैं। ज़रा शिक्षिकाओं से पूछिए कि आप बच्चों से इतने चित्र क्यों बनवाती हैं? तो वे उत्तर देंगी, "इससे बच्चे हाथ चलाना सीख रहे हैं, उनके हाथ का संतुलन बन रहा है; उनकी रचनात्मकता, मौलिक सोच और कल्पनाशीलता को बढ़ावा दे रहे हैं वगैरह-वगैरह।" कभी-कभी मैंने यह भी नोट किया कि अगर हमारे पास कोई गतिविधि नहीं होती तब भी हम बच्चों से चित्र बनवा लेते हैं। वैसे मैं इस लेख के माध्यम से छोटे बच्चों (4-6 वर्ष) के चित्र बनाने की प्रक्रिया के बारे में अपने कुछ अनुभव बांटना चाहूंगा।

क्या कहते हैं ये चित्र

जब मैंने सेंटर पर बच्चों के साथ काम करना शुरू किया तो मेरे पास 20-22 बच्चे आते थे। मैं उनसे लगभग रोज़ ही चित्र बनवाया करता था। अब यहां पर एक सवाल उठ सकता है कि चित्रों से शुरूआत क्यों हुई? लिखने से क्यों नहीं?

इस बारे में मुझे लगता है कि बच्चों के लिए 'चित्रों की दुनिया' जितनी पास है उतने शब्द या अक्षर नहीं। बच्चों के लिए 'शब्द-अक्षर' अमूर्त हैं। अगर हम 'क' लिख दें तो बच्चे के लिए 'क' माने क्या हुआ? लेकिन जब बच्चा कबूतर देखता है तो उसका चित्र पहचानना बच्चे के लिए ज़्यादा आसान होता है। बच्चों के साथ काम करते हुए मुझे यह भी लगा कि बच्चा आकार बनाने के बाद लिखना जल्दी सीखता है।

शुरू-शुरू में बच्चों ने कागज़ व रंग लेने में काफी झिझक दिखाई। वे कहते कि हमें तो कुछ बनाना आता ही नहीं। तब उनको प्रोत्साहित करने के लिए मैंने कुछ आकार बनाकर दिखाए। जैसे गोल, त्रिकोण, चौकोन आदि। धीरे-धीरे ये आकार किन-किन आकृतियों में बदल गए, मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। जैसे गोल से बच्चों ने लड़का-लड़की, त्रिकोण से झुग्गी या घर, चौकोर से पतंग आदि बनाना सीखा। इन आकारों से शुरू करके बच्चों ने और बहुत सारी आकृतियां बनाई जिन्हें शायद हम आप न पहचान पाएं लेकिन अगर आप बच्चों से पूछें तो वह तुरन्त बता देंगे कि यह क्या बना है?

ज़रा उनके चित्रों को और ध्यान से देखें। अगर बच्चों ने लड़का बनाया है तो उसका मुंह ज़्यादा चौड़ा हो जाएगा, गर्दन व टांगे ज़्यादा लम्बी हो जाएंगी। यह इसलिए कि अभी इनके

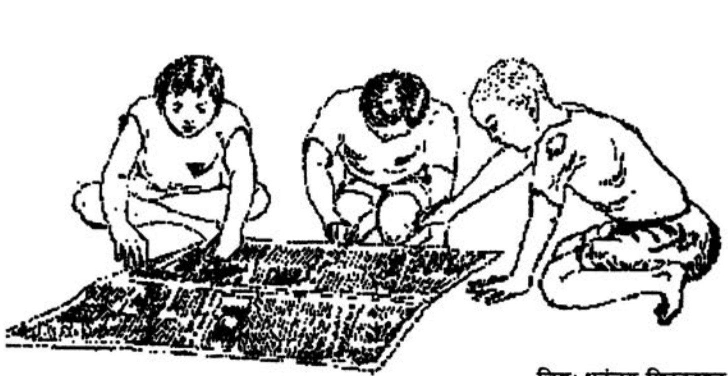
हाथ का संतुलन इतना नहीं बना है कि आपको पूर्ण आकृति दे सकें। कुछ चीज़ें उल्टी-सीधी भी बन जाएंगी। वैसे मोटे-पतले व छोटे-बड़े में आपको ज़्यादा अंतर नज़र नहीं आएगा।

कुछ रंग ही क्यों

इसके बाद रंग भरने की प्रक्रिया पर गौर करें तो बच्चे आपसे कुछ ही रंग मांगेंगे जैसे – लाल, हरा, काला, संतरी। लाल रंग की मांग बहुत ज़्यादा रहती है। और इस बात पर भी गौर करना बहुत ज़रूरी है कि अगर बच्चे आपसे लाल रंग मांग रहे हैं तो 'लाल' का मतलब 'लाल' ही नहीं है – बच्चों के लिए लाल का मतलब नारंगी, पीला, नीला कुछ भी हो सकता है।

यहां मेरा कहने का मतलब है कि बच्चे की रंगों की पसंद भी व्यक्तिगत होती है। अगर आप उन्हें अपने मन से दो-चार रंग दे दें तो वे संतुष्ट नहीं होते। उन्हें रंगों के डिब्बे से खुद रंग चुनना बहुत अच्छा लगता है। वे अधिकतर चटक रंग ही चुनते हैं।

अब बच्चों को रंग भरते हुए देखिए। वे रंगों से कागज़ को इस तरह भरेंगे कि कागज़ ही फट जाए। लेकिन धीरे-धीरे वे आकृतियों में मेल बिठाते हुए उसके अन्दर रंग भरना सीख जाते हैं। और फिर आगे चलकर वे रंगों के बीच सामंजस्य बिठाना सीखते हैं। रंगों के सामंजस्य के बारे में 'देवकुमारी' का नाम लेना चाहूंगा। देवकुमारी शुरू-शुरू में जब मेरे सेंटर पर आई तो उसकी चित्र बनाने में इतनी दिलचस्पी नहीं थी। लेकिन अब वह मन से चित्र बनाती है। रंगों में वो नारंगी व काले रंग का प्रयोग करती है। उसके चित्रों की अपनी पहचान व शैली है। अगर आप ढेर सारे चित्रों में उसका चित्र रख दें तो



चित्र: धनंजय खिरवड़कर

रंगों के सामंजस्य की वजह से उसके चित्र तुरन्त पहचान में आ जाएंगे।

ज़रा पूछकर तो देखिए

बच्चों से चित्र बनवाने के बाद हम अक्सर उनसे नहीं पूछते (या शायद इसकी ज़रूरत नहीं समझते) कि उसने क्या बनाया है? लेकिन मुझे यह बहुत ज़रूरी लगता है। जब आप बच्चों से पूछते हैं कि आपने क्या बनाया है तो उनके चेहरे की चमक देखने लायक होती है। यह चमक उनके आत्मविश्वास को बढ़ावा देती है; साथ ही यह पूछकर आप बच्चे से एक रिश्ता भी बना रहे होते हैं।

लेकिन इसके साथ कुछ और चीज़ें भी जुड़ी हैं। जब आप शुरू-शुरू में उनसे पूछते हैं कि आपने क्या बनाया है? तो बच्चे जवाब नहीं देंगे और चित्र दिखाने में भी संकोच करेंगे। इससे यह बात सामने आती है कि अभी बच्चे में आत्मविश्वास की कमी है या वह आपसे घुल-मिल नहीं पाया है। कई बार ऐसा भी होता है कि उसका चित्र गंदा हो गया हो, कागज़ फट गया हो, या वह अपने चित्र को दूसरों से कमतर आंक रहा हो।

वैसे कागज़ फटने वाली स्थिति में हमारे लिए यह जानना ज़रूरी हो जाता है कि बच्चे से कागज़ क्यों फटा? हो सकता है धोखे से फट गया हो, या रबड़ अधिक घिसने से फट गया हो। कभी बच्चे खुद भी कागज़ फाड़ देते हैं क्योंकि वे अपने चित्र से संतुष्ट नहीं होते या चित्र बनाने के दौरान कागज़ इतना गंदा हो गया हो कि वह उसे किसी को दिखाने के लायक नहीं मान रहा हो।

इस स्थिति को हम अपने से जोड़ कर भी देख सकते हैं – जैसे अपने स्कूली जीवन में हमें अक्सर सुलेख लिखना होता था। अगर हमारा सुलेख गंदा हो जाए या उस पर स्याही का धब्बा पड़ जाए तो हम वह पन्ना फाड़ देते थे और उसे दुबारा लिखते थे। उस स्थिति के दो पहलू समझ में आते हैं एक तो शिक्षक का डर और दूसरा खुद की संतुष्टि का। आज भी अगर हम कोई महत्त्वपूर्ण खत वगैरह लिख रहे होते हैं तो उस में काट-पीट करना नहीं चाहते और गलत होने पर फिर से लिखते हैं। इन सब बातों को मैं इसलिए रख रहा हूं कि असल में हम इन छोटी-छोटी बातों पर ध्यान नहीं देते और कागज़ फट जाने पर बच्चों को बुरी तरह डांटते हैं। तो चलिए चित्र वाली बात पर दुबारा लौटते हैं।

चित्र बनवाने के बाद जब आप बच्चों से उन्हें बोर्ड पर लगाने को कहते हैं तब ध्यान दीजिए कि बच्चे कितने करीने से अपने चित्र को बोर्ड पर लगाते हैं। तब उन्हें लगता है कि



चित्र: धनंजय खिरवड़कर

उनके चित्र को किसी ने मान्यता दी है। यह प्रोत्साहन उन्हें चित्रों में और दिलचस्पी लेने में मदद करता है।

स्कूली चित्रों की हकीकत

मैं सरकारी और पब्लिक स्कूलों में बनवाए जाने वाले चित्रों के बारे में भी कुछ कहना चाहता हूं।

पहली बात तो यह कि इन स्कूलों में बच्चों को रंग व कागज़ घर से लाने को कहा जाता है। और होता यह है कि अधिकतर बच्चे कागज़ या रंग घर पर ही भूल जाते हैं।

दूसरी बात कि उनके माता-पिता व शिक्षक इसे एक गौण विषय के रूप में मानते हैं। अक्सर मुझे माता-पिता से यह भी सुनने को मिलता है कि चित्र बनाना छोड़ो – कुछ सवाल करो या अंग्रेज़ी पढ़ो।

वैसे इन स्कूलों में बनवाए जाने वाले चित्र बेहद बोरियत भरे होते हैं। इनका बच्चों की आसपास की दुनिया से कोई संबंध नहीं होता। आमतौर पर वहां बच्चों से पेड़, फूल, पत्ते, साड़ी का किनारा, सीनरी आदि जैसे चित्र बनवाए जाते हैं। अब साड़ी के

किनारे से बच्चे को क्या मतलब? बच्चे यदि सीनरी बनाएंगे तो पहाड़ों से निकलता सूरज दिखाएंगे। क्या यह दृश्य बच्चों ने देखा है? इन चित्रों को बनवाते हुए शिक्षक और खुद बच्चे भी इतने 'टाइप्ड' हो जाते हैं कि इनके अलावा और चीज़ों के बारे में उनके लिए सोचना बहुत मुश्किल होता है। शायद 'राखी' की बात से कुछ स्पष्टता हो। चित्र बनाने के लिए एक दिन उसने मुझसे चार्ट मांगा — मैंने पूछा कि क्या बनाओगी? तो उसने कहा — "गुलाब का फूल।" मैंने कहा, "कोई और चीज़ बनाओ, जैसे अपने सेन्टर के बारे में, कोयला गाड़ी या बस्ती की कोई भी चीज़।" यह कहते हुए मैंने उसे चार्ट दे दिया। दूसरे दिन मैंने देखा कि वह चार्ट पर एक बड़ा-सा गुलाब का फूल बना लाई। ज़ाहिर है स्कूल में बनवाए गए चित्रों के आगे वह कुछ सोच नहीं पाई।

यानी स्कूल में किताबों से नकल कर बनवाए गए चित्रों के द्वारा हम बच्चों को आसपास की दुनिया से और उनकी स्वाभाविक सोच से काट रहे हैं। इसलिए यह ज़रूरी हो जाता है कि बच्चों से इस तरह के ही चित्र बनवाए जाएं जो उनकी स्वाभाविक सोच, कल्पनाशीलता, रचनात्मकता को बढ़ावा दे सकें।

शायद स्कूली अध्यापक भी इन चित्रों में बंध से गए हैं। अगर कोई बच्चा अपने मन से 'चील-बिलउवा' चित्र बनाता है तो उनके लिए वह कोई महत्व नहीं रखता। उल्टे वे बच्चों से कहते हैं कि किताब से सुन्दर चित्र बनाकर लाओ। अब इस सुन्दर चित्र को बच्चा कैसे बनाता है? ज़रा देखें — कक्षा में बच्चे को अध्यापक से 'गुड' लेना है इसलिए उसे सुन्दर चित्र बनाना है। इसलिए वह उस किताब से चित्र ट्रेस करता है या घर से बनाकर लाने के लिए कहा गया हो तो वह अपने माता-पिता, भाई-बहिन या अन्य किसी से बनवाता है।

अब आप ही सोचिए बच्चों के ये स्कूली चित्र ऊपर से कितने सुन्दर हैं पर वास्तव में हैं कितने खोखले?

कमलेश चन्द्र जोशी — दिल्ली में 'अंकुर अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र' में बच्चों के साथ विविध गतिविधियां करते और करवाते हैं। अंकुर संस्था दिल्ली की पांच झुग्गियों और पुनर्वास बस्तियों में बच्चों और युवतियों के साथ काम करती है।